नव वेदान्ती स्वामी विवेकानन्द के सर्वजनीन–प्रेमयोग की वर्तमान में प्रासंगिकता

डॉ0 अवधेश कुमार आर्य*

आधुनिक भारत में नवचेतना के संचारक वीरऋषि[1] स्वामी विवेकानन्द भारतीय राष्ट्रीय चरित्र के निर्माता माने जाते हैं। उन्होंने आधुनिक भारतीय राष्ट्रवाद के स्वावलम्बी आधार की नींव रखी और भारतीयता की प्रजातीय–चेतना को दृढ़ करने पर बल दिया, उनकी राष्ट्रवाद की धारणा एक ऐसी आध्यात्मिक वैचारिक तत्वों पर आधारित है जिसका व्यवहार में सरलता से अनुपालन किया जा सकता है। विवेकानन्द ने आधुनिक भारत में राष्ट्रवाद की धारणा को आध्यात्मिक वैचारिक धरातल प्रदान किया। उनके इसी वैचारिक क्रांति के साथ ही आधुनिक भारत में राष्ट्रीय चरित्र में आध्यात्मीकरण की परम्परा का श्रीगणेश हुआ।

विवेकानन्द ने प्राचीन अरस्तू सम्प्रदाय की रचनाओं का ही नहीं अपतु आधुनिक ह्यूम, शैली, काण्ट, शापेनहावर, मिल, स्पेंसर इत्यादि पाश्चात्य विचारकों का भी अध्ययन किया था। किन्तु उनको अंतिम संतोष न तो प्लेटो के अपरिवर्तनशील प्रत्ययों में मिला, न हेगल के द्वन्द्वात्मक प्रत्ययवाद में और न सार्वभौमिक बुद्धि में। अद्वैत वेदान्त ही उन्हें सच्ची शान्ति एवं संतोष दे सका। रोमा रोलां ने स्वामी विवेकानन्द के विषय में कहा है कि, 'स्वामी विवेकानन्द की रचनाओं में वर्णित सच्चा वेदान्ती योग एक 'आध्यात्मिक अनुशासन' है जैसा पाश्चात्य दार्शनिकों की ''भाषण–पद्धति'' (कार्टेज़ियन मैथड), जिसे सीधे रास्ते से सत्य की ओर बढ़ने के लिये ग्रहण किया है। पश्चिम की भॉति यह सीधा रास्ता परीक्षण और तर्क का रास्ता है।[2] रोचक बात यह है कि यह भाषण–पद्धति पाश्चात्य जगत् को प्राचीन भारतीय चिन्तन की ही देन है। स्वामी विवेकानन्द ने भारत में नवचेतना का संचार करने के लिये इसी प्राचीन भारतीय चिन्तन पद्धति के मार्ग पर चलने का आह्वान कर राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण किया है।

आध्यात्मिक अनुभूति का व्यावहारिक जीवन में सार्थक प्रयोग ही उनके विचारों को किसी भी देश–काल में चरितार्थ होने का सामर्थ्य प्रदान करता है। वेदान्त व अध्यात्म आधारित हिन्दू दर्शन के महान् दार्शनिक के रूप में विख्यात नव–वेदान्ती स्वामी विवेकानन्द ने मानव कल्याण के चार महान् पथों – **कर्मयोग**, **भक्तियोग**, **राजयोग** एवं **ज्ञानयोग** के मूल में **'सर्वजनीन प्रेमयोग**' की उपादेयता को विश्वपटल पर रखा। इस सर्वजनीन प्रेमयोग के सिद्धान्त को उनके नव वेदान्त का सूत्र कहा जा सकता है। भारत में व्याप्त भेदभाव वाली सामाजिक व्यवस्था ने विकास के मार्ग को सदा से अवरूद्ध कर रखा है तथा वर्तमान भारत स्वतंत्र होते हुए भी इस भेदभाव वाली गुलामी की जंजीरों में जकड़ा हुआ है। किसी भी देश के लिये ऐसी भेदभाव वाली सामाजिक व्यवस्था एक अभिशाप है। ऐसे वातावरण में राष्ट्रहित एवं देशहित की भावना का बीज अंकुरित हो सके, इसके लिये राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण किया जाना अत्यावश्यक है अन्यथा कोई भी देश इस भेदभाववादी व्यवस्था में सदैव गुलाम ही बना रहेगा। विवेकानन्द आधुनिक भारत के भविष्य निर्माता हैं और अपने इस महान् कार्य के लिये उन्होंने सर्वप्रथम देश को इन बुराईयों से मुक्त करने हेतु वैचारिक क्रांति लाने का कार्य किया। दिव्यदृष्टि सम्पन्न इस भविष्यवेत्ता सन्यासी ने को भविष्य के भारत की विसंगतियों का पूर्वाभास था और उन्होंने कहा था कि – **'हमारे भारत वर्ष का यह महान् दोष है कि हम कोई स्थाई संस्था नहीं बना सकते हैं और उसका कारण यह है कि दूसरों के साथ हम कभी अपने उत्तरदायित्व का बंटवारा नहीं करना चाहते और हमारे बाद क्या होगा – यह भी हम नहीं सोंचते।'**[3] भारत के इस महान् सपूत ने मानवधर्म की सार्थकता हेतु नवयुवकों का आह्वान कर परम्परागत रूढ़ीवादी व्यवस्था से प्रतिकार किया। भारत मॉ की गुलामी की

* **असिस्टेंट प्रोफेसर (दर्शनशास्त्र), महामाया राजकीय महाविद्यालय धनूपुर, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश**

जंजीर राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण होने पर ही तोड़ी जा सकती थी। नवयुवकों में राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण के लिये नव वेदान्ती विवेकानन्द ने राष्ट्रवाद तथा देशभक्ति का आह्वान करते हुए कहा– '**अगले पचास वर्ष के लिये अन्य सब व्यर्थ के देवताओं को अपने मन से निकाल दो। यही एक मात्र देवता है जो जाग्रत है। सर्वत्र उसी के हॉथ, सर्वत्र उसी के पैर, सर्वत्र उसी के कान हैं, और वह हर वस्तु को आच्छादित किये हुए है। अन्य सब देवता सो रहे हैं। हम व्यर्थ के देवताओं का अनुगमन कर रहे हैं, किन्तु उस देवता की, उस विराट की जो हमें चतुर्दिक दिखाई देता है, हम पूजा नहीं करते। सबसे पहली पूजा उस विराट की पूजा है – उनकी जो हमारे चारों ओर हैं। ये सब हमारे देवता हैं – ये मनुष्य तथा पशु – और पहले देवता जिनकी हमें आराधना करनी है हमारे देशवासी हैं।**'[4]

स्वामी विवेकानन्द के दर्शन में ईश्वर से तात्पर्य समष्टि रूप में इस सम्पूर्ण विश्व से है, सम्पूर्ण जीव एवं मानव से है जिसकी हमें पूजा करनी चाहिये। मानव पूजा ही मनुष्य को ईश्वर तक ले जाता है। उन्होंने कहा कि **'समष्टि से प्रेम किये बिना हम व्यष्टि से प्रेम कैसे कर सकते हैं? ईश्वर ही वह समष्टि है। सारे विश्व का यदि अखण्ड रूप से चिन्तन किया जाय, तो वही ईश्वर है, और उसे पृथक्–पृथक् रूप में देखने पर वही दृश्यमान् संसार व्यष्टि है, मात्र इकाई है। समष्टि वह इकाई है जिसमें लाखों छोटी–छोटी इकाइयों का मेल है। इस समष्टि के माध्यम से ही सारे विश्व को प्रेम करना सम्भव है।'**[5] मानव की पूजा ही ईश्वर की पूजा है। यह सिद्धान्त उनके सर्वजनीन प्रेमयोग के महान् पथ के रूप में प्रसद्धि है।

भारतीय मन सदा से सब बातों में – भौतिक विज्ञान, मनोविज्ञान, भक्तितत्व या दर्शन इत्यादि ज्ञान की समस्त विधाओं में, एक समष्टि या व्यापक तत्व की इस अपूर्व खोज में ही लगा रहा है। 'यदि हम केवल एक के बाद दूसरे व्यक्ति से प्रेम करते चलें, तो अनन्त काल में भी संसार को एक समष्टि रूप में प्यार करने में समर्थ न हो सकेंगे। परन्तु अन्त में जब यह मूल सत्य ज्ञात हो जाता है कि समस्त प्रेम की समष्टि ही ईश्वर है, संसार के मुक्त, बद्ध या मुमुक्षु सारे जीवात्माओं की आदर्श–समष्टि ही ईश्वर है, तभी यह विश्वप्रेम सम्भव हो सकता है। यदि हम इस समष्टि को प्यार करें, तो इससे सभी को प्यार करना सहज हो जाता है। इस प्रकार हमारा हृदय प्रेम का अनन्त स्रोत बन जाता है। और जब हम इस प्रेम की और भी उच्चतर अवस्थाओं में पदार्पण करते हैं, तब संसार की वस्तुओं में क्षुद्र भेद की भावनाएँ हमारे हृदय से सर्वथा लुप्त हो जाती हैं तब मनुष्य मनुष्य के रूप में नहीं दीखता वरन् साक्षात् ईश्वर के रूप में ही दीख पड़ता है; पशु में पशुरूप नहीं दिखाई पड़ता, वरन् उसमें स्वयं भगवान् ही दिखाई पड़ते हैं, यहॉ तक कि ऐसे प्रेमी की ऑखों से बाघ का भी बाघरूप लुप्त हो जाता है और उसमें स्वयं भगवान् प्रकाशमान् दीख पड़ते हैं। इस प्रकार प्रेमयोग की इस प्रगाढ़ अवस्था में सभी प्राणी हमारे लिये उपास्य हो जाते हैं। विवेकानन्द का प्रेमयोग भक्ति का प्रथम सोपान है अर्थात् 'ईश्वर के प्रति परम् अनुराग' है। कठोपनिषद में कहा गया है –

'नायात्मा प्रवचनेन लभ्यो, न मेधया न बहुना श्रुतेन।
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनूँस्वाम्।।'[6]

अर्थात्, तुम भले ही संसार की सारी पुस्तके पढ़ जाओ, पर यह प्रेम वाक्शक्ति द्वारा प्राप्य नहीं है, न तीव्र बुद्धि से और न शास्त्रों के अभ्यास से ही। जिसे ईश्वर की चाह है, उसी को प्रेम की प्राप्ति होगी। उसी के पास भगवान् अपने आपको प्रकट करेंगे।

विवेकानन्द के प्रेमयोग के आह्वान ने पूरे भारतवासियों को एकता के सूत्र में पिरोने का कार्य किया है और सभी प्रकार के भेदभाव को मिटा कर समष्टि रूप में स्वयं में निहित देशप्रेम की उपासना करने का संदेश जन–जन तक पहुँचाया है। विवेकानन्द के सर्वजनीन प्रेमयोग की प्रासंगिकता का सफल प्रतिमान हम **1893 ई0** में शिकागो में विश्वधर्म सम्मेलन में पाते हैं जब उन्होंने विश्व के समस्त

धर्मावलम्बियों को धर्मगत् भेदभावों से पृथक कर धर्मों में खिंची दिवारों को तोड़कर सबको मनुष्य की नैसर्गिक 'मानव धर्म' में पिरोकर रख दिया। विश्व के इतिहास में विवेकानन्द द्वारा एक ऐसा दिन भी आया है जब सारे धर्मों की दीवारे ढह गयी और उसका स्वरूप एक सर्वधर्म ने ग्रहण कर लिया, यह सोंचकर आश्चर्य करने की आवश्यकता नहीं है बल्कि वर्तमान विश्व राजनीति में महान् विवेकानन्द के उस मानवधर्म के व्यावहारिक स्थापना पर विमर्श करने की आवश्यकता है।

भारत में धर्म एवं समाज के लहू में व्याप्त हो चुकी भेदभाव की घिनौनी विषमतावादी व्यवस्था से मानव जाति को निवृत्त करने के लिये महान् युगपुरूषों में जहॉ **महावीर स्वामी**, **गौतम बुद्ध** ने मनुष्य को सत्य के मार्ग पर चलने हेतु ज्ञान की ज्योति जलाई, उसी परम्परा में मध्यकाल में **नानक**, **कबीर, रैदास** जैसे महान् सत्यव्रती महात्माओं ने इसी महान् कार्य हेतु अपने स्वर मुखरित किये। आधुनिक भारत में धर्म एवं समाज के महान् सुधारकों में **स्वामी दयानन्द सरस्वती** को इसी प्रकार की सामाजिक क्रांति लाने के प्रतिक्रिया स्वरूप विष दिया गया। हिन्दू धर्म एवं समाज में सुधार लाने वाले मनीषियों की इसी परम्परा में वेदान्त के प्रकाण्ड विद्वान होते हुए भी स्वामी विवेकानन्द ने आधुनिक भारत के निर्माण के लिये परम्परागतरूप से स्वीकृत **शंकराचार्य** सदृश्य अद्वैत वेदान्तियों के पथ पर न चलकर, मानव कल्याण एवं देश के रक्षार्थ अपने नववेदान्ती चक्षु से आध्यात्म का व्यावहार से साक्षात् कर मानव मन को 'सर्वजनीन प्रेमयोग' के मार्ग की ओर अग्रसरित करने का महान् कार्य किया। उन्होंने 'सर्वजनीन प्रेमयोग' का एक ऐसा मार्ग दिखलाया जिसका अनुसरण कर प्रत्येक धर्म, समाज एवं व्यक्ति में एक नयी सोंच उत्पन्न करने की आवश्यकता को समझा गया और स्वामी विवेकानन्द ने इस नयी सोंच को संजोने की एवं उसे सुरक्षित करने की बात को नवयुवकों में चारित्रिक उन्मुखीकरण के माध्यम से पूर्ण करने का आदर्श रखा। यह कार्य आध्यात्मिक संस्कृति वाले भारत में आध्यात्मिकता के पवित्र मार्ग पर चल कर ही व्यावहारिकता में चरितार्थ हो सकता था। इसी परम्परा का साक्षात् प्रतिमान हम भारतीय संविधान के निर्माता **डा0 भीमराव अम्बेडकर** में पाते हैं, जिन्होंने देश में व्याप्त समस्त भेदों से प्रतिकार कर भारतीयता के अलंकरण को विश्वपटल पर आलोकित किया है।

वर्तमान में विभिन्न मतमतान्तरों तथा विचारधाराओं में घोर पारस्परिक संघर्ष पाया जाना कोई नयी बात नहीं है। हमारे मूल सिद्धान्तों का चिरन्तन सत्य–समूह जिसने हमें शक्ति दी थी, उत्साह एवं साहस प्रदान किया था, आज मानो किनारे खदेड़ दिया गया है और उसकी जगह अनेक नयी राजनीतिक, सामाजिक एवं साम्प्रदायिक विचारधाराओं ने अपना अड्डा जमा लिया है, यहॉ तक कि आज व्यक्ति के चारित्रिक मानदण्ड में भी पर्याप्त बदलाव आ रहे है। ऐसा लगता है कि मानो इन सब नवीन विचारों ने देश पर एक साथ धावा बोल दिया हो। भारत के अतीत के गौरव के विषय में स्वामी विवेकानन्द ने कहा है कि– **'जब ग्रीस का अस्तित्व नहीं था, रोम भविष्य के अन्धकारमयी गर्भ में छिपा हुआ था, जब आधुनिक यूरोपियनों के पुरखे जर्मनी के घने जंगलों में अन्दर छिपे रहते थे और जंगली लोगों की तरह अपने शरीर को नीले रंग से रंगा करते थे, तब भी भारतवासी कितने क्रियाशील थे, इस बात की गवाही हमें इतिहास दे रहा है। उससे भी पहले, जिस समय की स्थिति को कोई इतिहास नहीं बता सकता, जिस सुदूर अतीत की ओर नजर दौड़ाने का साहस किम्वदन्ती को भी नहीं होता, उस अत्यन्त प्राचीनकाल से लेकर अब तक न जाने कितने ही भाव तरंगे वर्तमान भारत से प्रसूत हुई हैं, पर वे सब तरंगें अपने आगे शान्ति तथा पीछे आशीर्वाद लेकर अग्रसर हुईं।'**[7] आज हमारे समक्ष ऐसा मानदण्ड प्रस्तुत होना चाहिये जो हमें सब बातों का ठीक–ठीक सुस्पष्ट तथा वास्तविक मूल्य ऑकने में सहायता करे और यह मानदण्ड नवयुवकों में चरित्र निर्माण के द्वारा ही संभव है। नवयुवकों के लिये ऐसी सोंच का होना आवश्यक है जिससे कि वे बिल्कुल सही, असंदिग्ध और परिष्कृत मार्ग पर अग्रसर हो सकें। स्वामी विवेकानन्द ने वर्तमान भारत में व्याप्त इन विसंगतियों का समाधान अपने दिव्य चक्षुओं द्वारा

वर्षों पूर्व ही नवयुवकों के चरित्र निर्माण में देखा। राष्ट्र के नवयुवकों का आह्वान करते हुए उन्होंने कहा था कि **''ईर्ष्या ही हमारे दाससुलभ जातीय चरित्र का धब्बा है। औरों का तो क्या कहना, स्वयं सर्वशक्तिमान ईश्वर भी इस ईर्ष्या के कारण हमारा कुछ भला नहीं कर सकता।..... मेरे बारे में समझो कि मुझे जो कुछ करना था वह सब मैं कर चुका – अब मैं मर गया, यही समझो कि सब कामों का भार तुम्ही पर है। युवकों, समझो कि तुम्हीं इस काम के लिए विधाता से भेजे हुए हो। तुम काम में लग जाओ।'**[8] आज की परिस्थिति में विवेकानन्द का यह संदेश देश के लिये कितना मूल्यवान है, इसकी महत्ता को शब्दों में ऑकना सहज नहीं। निश्चय ही विवेकानन्द का सर्वजनीन प्रेमयोग का आदर्श वर्तमान भारत के राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता के लिए एक व्यावहारिक प्रतिमान है जिसे भारत के इन भाग्यनिर्माता नवयुवकों के जीवन में चरितार्थ होना आज वर्तमान भारत की पुकार है।

संदर्भ :

[1] रोमां रोलां, Life of Vivekanand and The Universal Gospel, अनुवादक डा0 रघुराज गुप्त, पृ0 191.
[2] वही, पृ0 145.
[3] भारत में विवेकानन्द, चतुर्थ संस्करण, स्रोत– विवेकानन्द राष्ट्र को आह्वान, सप्तम संस्करण, रामकृष्ण मठ, नागपुर, पृ0 56.
[4] वर्मा, वी0 पी0, आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन, सं0 2000, पृ0 121.
[5] भक्तियोग– स्वामी विवेकानन्द, अनुवादक डा0 विद्यासागर शुक्ल, पृ0 82–84.
[6] कठोपनिषद, 1–3–23.
[7] भारत में विवेकानन्द, चतुर्थ संस्करण, स्रोत– विवेकानन्द राष्ट्र को आह्वान, सप्तम संस्करण, रामकृष्ण मठ, नागपुर, पृ0 53.
[8] वही, पृ0 57.